

समुद्रगुप्त का प्रयाग-स्तम्भ अभिलेख

प्रोफेसर पुरुषोत्तम सिंह

प्रोफेसर एवं प्राचार्य

महाराज बलवंत सिंह पीजी कॉलेज

गंगापुर वाराणसी

मूल पाठ

- 1- कुल्यै:]?[स्वं तिस
- 2-]यस्य?]
- 3- मुंब ?
- 4- स्फुट, रह, क्ष: स्फुटो) , सित प्रवितत
- 5- यस्य प्र । ज्ञानु । बंगोचित सुख-मनसः शास्त्र-तत्त्व
- 6- [स] त्काव्य-श्री विरोधान्बुध-गुणित-गुणाज्ञाहतानेव कृत्वा [वि] इल्लोके वि [ना] [शि] स्फुट बहु-कविता-कोति-राज्यं भुनक्ति ।
- 7- ख्वा, य्यों हीत्युपमुह्य भाव-पिशुनैरुत्कर्णितं रोमभिः सभ्ये-बूच्छ्वसितेषु तुल्यकुलज म्लानाननोद्वीक्षि [त]:
- 8- [स्ने]ह-व्यालुलितेन वाष्पगुरुणा तत्वेक्षिणा चक्षुषा यः पित्राभिहितो निरीक्ष्य , निखिलां, पाह्य वेव । मुर्वी, मिति ।
- 9-दृष्ट्वा कर्माण्यनेकान्यमनुज - सदृशान्यद्भु , तोदिभन्न-हर्षा भ (1) वैरास्वादयन्तः, के, चित् ।।
- 10-वीर्योत्तप्ताश्च केचिच्छिरणमुपगता यस्य वृत्तेप्रणामे (1) प्यति प्रस्तेषु
- 11-संग्रामेषु स्वभुजविजिता नित्यमुच्चापकारा श्वः श्वो मान-प्रः । ७१
- 12-तोषोतुङ्ग स्कुट-बहु-रस स्नेह-फुल्लं मनोभिः पश्चात्ताप वमस्य (1) इसन्त
- 13-उबवेलोदित-बाहु-बीयं असादेकेन येन क्षणादुन्मूल्याच्युत-नागसेन ग
- 14-दण्ड ग्रीह्यतं व कोतकुलजं पुष्पाह्वये क्रीडता सूय्यं (?) नित्य (?) तट
- 15-धम्म-प्राचीर-बन्धःशशि-कर-शुचयः कीर्तयः स-प्रताना वैदुष्यंशतत्त्व-भेदि प्रक्षम कुयमु तार्थम् (1)
- 16- (अद्ध येयः) सूक्तमार्गाः कवि-मति-विभवोत्सारणं चापि काव्यं को नु स्याद्योस्य नस्याद्गुण-मति-(बि) दुषां ध्यानपात्रं य एकः
- 17-तस्य विविध-समर शतावतरण दक्षस्य स्वभुज-बल परावक-मं कबन्धोः पराक्रमाङ्कस्य परशु-शर-शंकु-शक्ति-प्रसासि तोमर
- 18-भिन्दिपाल-नराच-वंतस्तिकाद्यनेक-प्रहरण-विरुद्धा-कुल-व्रण-शताङ्कः-शोभा-समुदयोपचित-कान्ततर-वर्मणः
- 19-कौसलकमहेन्द्र-माह (1) कान्तारकव्याघ्रराज कौरालक-मण्टराज-पण्डपुरक महेन्द्रगिरि-कौडूरकस्वामिदत्तैरण्ड पल्लकदमन काञ्चेय कविष्णु गोपावमुक्तक-
- 10-नीलराज वैङ्गयक हस्तिवम पालककोग्रसेन वैवराष्ट्रक कुबेर कौस्थलपुरक धनञ्जय-प्रभृति सव्यं दक्षिणापथराज-ग्रहण मोक्षानुग्रहजनित प्रतापोन्मिश्र माहा- भाग्यश्य
- 21-रुद्रदेव मतिल-नागदत्त चन्द्रवम्मं गणपतिनाग नागसेनाच्युत. नन्दिवल वर्माद्यने कार्याक्ति राज प्रसभोद्धरणोवृत्त-प्रभाव महतः परिचारिकीकृत सटिविक राजस्य
- 22-समतट डवाक कामरूप नेपाल-कतू पुरादिप्रत्यन्त-नृप-तिभिर्मालवाजु नायन यौधेय माद्रका मीर- प्राजू शन सन. कानीक काक-खरपरिकादिभिश्च सर्व करदानाज्ञाकरण प्रणामागमन

- 23-परितोषित-प्रचण्डशासनस्य अनेक भ्रष्टराज्योत्सन्न-राज वंश प्रतिष्ठापनोद्भूत-निखिल-भु (व) न (विचरण शा) न्त-यशसः दं वपुत्रषाहिषाहानुषाहि शकमुरुण्डः संहल-कादिभिश्च
24-सर्वद्वीप वात्तिभिरात्मनिवेदन- कन्योपायनदान-गरुत्मदं-कस्वविषय-भुक्तिशासन (य) । चनाद्य पाय सेवा-कृत बाहु वीर्य्य प्रसर धरणि-वन्धस्य पृथिव्याम प्रतिरथस्य
25-सुचरित शतालकृतानेक गुण- गणोत्सक्तिभिश्चरण तल-प्रमृष्टान्यनरपतिकीर्तेः साध्वसाधूदय प्रलय हेतु पुरुषस्या-चिन्त्यस्य भक्त्यवनति मात्र ग्राह्य-मृदुहृदयस्यानुकम्पा-वतो नेक गो-शत सहस्र प्रदायिन
26-कृपण-दीनानाथातुर जनोद्धरण मन्त्रदीक्षाभ्युपगत मनसः समिद्धस्य विग्रहवतो लोकानुग्रहस्य धनद-वरुणे-द्रान्तक-समस्य स्वभुज-बल-विजितानेक नरपति विभव-प्रत्यप्पणा नित्य व्यापृतायुक्तपुरुषस्य
27-निशितविदग्धमति-गान्धवं ललितैर्ग्रीडित त्रिदशपतिगुरु- तुम्बुरुनारदादेविवृज्जनोपज्ञीव्यानेक-काव्य विक्रयाभिः प्रति-ष्ठित कविराजशब्दस्य सुचिर स्तोतव्यानेकाद्भुतोदारचरितस्य
28-लोकसमय-विक्रया नुविधान-मात्र मानुषस्य-लोक-धाम्नोदेवस्य महाराजश्रीगुप्तप्रपौत्रस्य महाराज श्री घटोत्कच महाराजाधिराज श्रीचन्द्रगुप्त-पुत्रस्य
29-लिच्छवि-दौहित्रस्य महादेव्यां कुमार देव्यामुत्पन्नस्थ महाराजाधिराज श्री समुद्रगुप्तस्य सर्वं पृथिवी-विजय-जनितोदय-व्याप्त-निखिलावनितलां कीर्तिमितस्त्रिदशपति
30- भवन-गमनावान्त-ललित-सुख-विचरणामाचक्षाण इव भुवो बाहुरवमुच्छितः स्तम्भः (।) यस्य । प्रदान भुजविक्रम प्रशम-शास्त्रवाक्योदयं -रुपयं परि-संचयोच्छित्तमनेकमार्ग यशः (।)
31-पुनाति भुवनत्रयं पशुपतेज्जटान्तगु हानिरोध-परिमोक्ष शी प्रमिवपाण्डुगाङ्ग (पयः)एतच्च काव्यमेषामेव महारकपादानां दासस्य समीप-परिसर्प गानुग्रहोन्मीलित-मतेः
33-खाद्यटपाकिकस्य महादण्डनायक-अवभूतिपुत्रस्य सान्धि विग्रहिककुमारामात्य-म (हा दण्डनाय) क-हरिषेणस्य सर्वं भूत हितसुखायास्तु ।
34-अनुष्ठितं च परमभट्टारक-पादानुव्यातेन महादण्डनायक-तिल भट्टकेन ।

हिन्दी अनुवाद -

- 1- अपने फुलवालों के द्वारा
- 2- जिसका ?
- 3- धनुष की टङ्कार से ध्वंस किया विस्तार किया ।
- 5- जिसकी बुद्धि सत्सङ्ग के सुख की कामना करती थी, जो शास्त्र के तत्त्वार्थ का पोषक निश्चल ।
- 6- सत्काव्य और श्री के विरोध को बुधजनों के गुणित गुणों की नाज़ा से विनष्ट कर विद्वत् समाज में अविनाशी स्फुटकाव्य से प्राप्त कीतिरूपी राज्य का भोग करता है ।
- 7- तुम आर्य (श्रेष्ठ) हो, ऐसा कहते हुए पिता द्वारा भाव-विह्वल एवं रोमांचपूर्ण आलिंगन किया गया, सभासद, हर्ष से उच्छ्वसित थे । समान कुल बाले ईर्ष्यावश म्लान मुख होकर जिसे देख रहे थे ।
- 8- स्नेह से बिल्हल, अश्रुपूरित नेत्रों से तत्त्वदर्शी दृष्टि के द्वारा देखते हुए जिसके पिता ने कहा कि तुम इस सम्पूर्ण पृथ्वी का पोषण करो ।
- 9- जिसके अनेक अद्भुत अतिमानवी कार्यों को देखकर कुछ व्यक्ति अत्यन्त आनन्दित होते थे और कुछ
- 10- उसके शौर्य से संतप्त होते थे, कुछ प्रणाम करते हुए उसकी शरण में आ जाते थे, जो पीड़ितों के लिए
- 11- अपकार करने वालों को युद्ध में जीतता था
- 12- आनन्द से युक्त अत्यन्त रस और स्नेह से प्रफुल्लित मन से पश्चाताप वसंत में

- 13— जिसने अत्यन्त शक्तिशाली भुजाओं के बल से क्षण में ही अच्युत, नागसेन और गणपतिपनाग का उन्मूलन किया
- 14— जिसने अपनी सेना द्वारा कोटकुलज को बंदी बनवाया था और पुष्प नामक नगर में कीड़ा की थी। सूर्य नित्य तट ।
- 15— जिसका धर्म प्राचीर के समान दृढ़ था, कीर्ति चन्द्रमा की रश्मियों के समान उज्ज्वल और विस्तृत थी तथा जिसकी विद्वत्ता शास्त्र के तत्त्वों का भेदन करने वाली थी,
- 16— जो वेदों द्वारा प्रतिपादित सूक्तमार्ग का अध्येता था, कवियों के बुद्धि वैभव को प्रकाशित करने वाली उसकी कविता थी। ऐसा कौन सा गुण था जो उसमें नहीं था। गुणवान और विद्वानों का वह एक मात्र ध्यानपात्र था ।
- 17— जो विभिन्न प्रकार के सैकड़ों युद्धों के अवतरण में दक्ष, भुजबल को एक मात्र बन्धु समझने वाला पराक्रमी था तथा परशु, बाण, शंकु, प्रास, तल—बार, तोमर
- 18—भिन्दिपाल, नाराच, वैतस्तिक आदि अनेक प्रकार के शस्त्रों के प्रहार से बने हुए घावों से सुशोभित शरीर बाला ।
- 19— कौशल का महेन्द्र, महाकान्तर का व्याझराज, कैरल का मण्टराज, पिष्टपुर का महेन्द्रगिरि, कोट्टूर का स्वामिवत्त, एरण्डपल्ल का दमन, कांची का विष्णुगोप, अवमुक्त का
- 20— नीलराज, वेंगी का हस्तिवर्मन, पालक्क का उग्रसेन, देवराष्ट्र का कुबेर और कुस्थलपुर का धनंजय आदि समस्त दक्षिणापथ के राजाओं को ग्रहण (बंदी) करके मुक्त (मोक्ष) करने के अनुग्रह (राज्य लौटाने) से उत्पन्न प्रताप से संयुक्त महाभाग्य वाला था ।
- 21— जिसने रुद्रदेव, मतिल, नागदत्त, चन्द्रवर्मन, गणपतिनाग, नागसेन, अच्युत, नन्दि और बलबर्मों आदि अनेक आर्यावर्त के राजाओं को बलपूर्वक उलाड़ कर अपने प्रभाव को बढ़ाया तथा सम्पूर्ण आटविक प्रदेश के राजाओं को अपना सेवक बनाया ।
- 22— संमतट, डबाक, कामरूप, नेपाल, कर्तुपुर आदि सीमांत राज्यों तथा मालव, आर्जुनायन यौवेय, माद्रक, आभीर, प्रार्जुन, सनकानीक, काक, खरपरिक आदि समस्त जातियों ने अनेक प्रकार से कर देकर, आज्ञापालन कर, विनीत भाव धारण कर समय—समय पर उपस्थित होकर
- 23— जिसके प्रचंड शासन के प्रति संतोष (निष्ठा) प्रदर्शित किया, जो अनेक भ्रष्ट राज्यों एवं राजवंशों को पुनः प्रतिष्ठित करने से उत्पन्न समस्त संसार में फैले हुए शांत यश वाला था। जिसकी दैवपुष, शाहि शाहानुशाही, शक, मुरुण्ड तथा सिंहल
- 24—समस्त द्वीपवासी आत्मनिवेदन, कन्योपायन, अपने राज्यों पर शासन करने के लिए गरुड़ के चिह्न से अंकित आज्ञापत्र माँगकर अनेक प्रकार से सेवा करते थे, जिसने भुजाओं के बल प्रसार से समस्त पृथ्वी को बाँच लिया. सम्पूर्ण पृथ्वी पर जिसका कोई प्रतिद्वन्दी नहीं था.
- 25—जो सैकड़ों सत्कायों से अलंकृत, अनेक गुणों के समूह से अभिषिक्त चरणों से राजाओं की कीर्ति को पोछने वाला, साधुओं के लिए उदय तथा बसाधु के लिए प्रलय (बिनाश) का कारण, अचिन्त्य पुरुष, भक्ति और विन अंता मात्र से मृदु—हृदय हो जाने वालो दयावान, शत सहस्र गायों का दान करने वाला,
- 26—कृपण, दीन, अनाय और दुःखियों का उद्धार करने वाला, मंत्र से दीक्षित अन्तःकरण बांला, लोकानुग्रह की साक्षात् प्रतिमा, कुबेर, वरुण इन्द्र और यम के समान था. जिसके द्वारा नियुक्त दास उसकी मुजाओं के बल से जीते हुए राजाओं के वैभव को लौटाने में लगे हुए थे,
- 27—जिसने अपनी तीक्ष्ण और विदग्ध बुद्धि से तथा सङ्गीत—कला के ज्ञान से वृहस्पति तथा सङ्गीताचार्य तुम्बुरु और नारद आदि को लज्जित कर दिया था, जो चिद्धानों के उपजीव्य अनेक काव्यों की रचना से कविराज शब्द को प्रतिष्ठित करने वाला था, जिसके अनेक अद्भुत, उदार चरित स्तुति योग्य थे,
- 28—जो लौकिक कार्यों के पालन मात्र से ही मनुष्य था अन्यथा इस लोक में निवास करने वाला देवता स्वरूप था। महाराजा श्रीगुप्त का प्रपौत्र, महाराज श्री घटोत्कच का पौत्र महाराजाधिराज श्री चन्द्रगुप्त का पुत्र

- 29—लिच्छवि कुल का दौहित्र, महादेवी कुमारदेवी से उत्पन्न, समुद्रगुप्त का सम्पूर्ण पृथ्वी को विजित करने से उत्पन्न, यश समस्त संसार में व्याप्त था यहाँ से इन्द्र के
- 30— भवन तक पहुँचने वाली, ललित तथा मुखमय गतिबाली फौति को सूचित करने बाला पृथ्वी की मुजा के समान यह उन्नत स्तम्भ था। जिसका यश, दान, मुजाओं के पराक्रम, प्रज्ञा एवं शास्त्रवाच्य के उदय से ऊपर ऊपर अनेक उक्षत मागों से संचारित होता हुला
- 31—तीनों लोकों को भगवान शिव को जटा की अन्तगु हा में अवरुद्ध, परिमुक्त एवं शीघ्रता से प्रभावित होते हुए उज्ज्वल गङ्गा जल के समान पवित्र करता है। यह काव्य इन्हीं स्वामी के चरणों के दास, निरंतर समीप रहने के अनुग्रह के फलस्वरूप उन्मीलित बुद्धि बाले,
- 32—साद्यटपाकिक महादंडनायक प्रबभूति के पुत्र सान्धिविग्रहिक, कुमारा—मात्य, महादंडनायक हरिषेण की रचना सब प्राणियों के हित एवं सुख के लिए है।
- 33—परमभट्टारक के चरणों का निरन्तर ध्यान करने वाले महादंडनायक तिलभट्ट ने इसको अनुष्ठित (स्थापित) किया।

विवरणात्मक अध्ययन—

संस्कृत भाषा एवं उत्तरी ब्राह्मीलिपि में उत्कीर्ण समुद्रगुप्त की प्रशस्ति इलाहाबाद के किले में ३५ फुट लम्बे स्तम्भ पर उत्कीर्ण है। यह अभिलेख ९० ट्रायर, डब्लू० एच० मिल, जेम्स प्रिसेप, भाऊदाजी एवं फ्लीट आदि के प्रयत्नों के फलस्वरूप प्रकाश में आया। अशोक के समय में निर्मित यह स्तम्भमूल रूप में कौशाम्बी में स्थित था, क्योंकि इसमें कौशाम्बी के भिक्षु संघ में उत्पन्न विभेद को रोकने के लिए अशोक द्वारा दिये गये निर्देश भी उत्कीर्ण है। ह्वेनसांग तथा अल्बेरुनी ने, जो क्रमशः सातवीं और ग्यारहवीं शताब्दी में भारत जाये, प्रयाग का वर्णन करते समय इस स्तम्भ का उल्लेख नहीं किया है। इससे यह प्रकट होता है कि उनके समय तक यह अशोककालीन स्तम्भप्रयाग में नहीं था। सम्भवतः यह स्तम्भ अकबर या जहाँगीर के समय में इलाहाबाद के किले की शोभा बढ़ाने के लिए कौशाम्बी से लाया गया। इस पर जहाँगीर के समय का भी एक लेख उत्कीर्ण है।

प्रयाग—प्रशस्ति की प्रारम्भिक पंक्तियाँ जहाँगीर के द्वारा नष्ट करा दी गयी प्रतीत होती हैं। अतः कुछ महत्वपूर्ण जानकारी से हमें बंचित हो जाना पड़ा। अभिलेख के तीसरे श्लोक में क्रमशः समुद्रगुप्त के विद्याव्यसन और युवराज चुने जाने का संकेत मिलता है। ऐसा आभासित होता है कि समुद्रगुप्त के पिता चन्द्रगुप्त के समय में ही उत्तराधिकार की समस्या विता—दास्पद हो गयी। इस विवाद का कारण समुद्रगुप्त एवं तुल्यकुलज (एक ही बंश में उत्पन्न राजकुमार) थे। इस समस्या को सुलझाने के लिए चन्द्रगुप्त मैन सभासदों का एक अधिवेशन बुलाया, जिसने समुद्रगुप्त के पक्ष में अपना निर्णय दिया। समुद्रगुप्त के निर्वाचित होने पर सभासद प्रसन्न हुए, तुल्य—कुलजों के मुख म्लान हो गये, प्रसन्नता के कारण बण्डगुप्त के रोंगटे खड़े हो गये और नेत्रों में आँसू आ गये। उसने समुद्रगुप्त को हृदय से लगाकर कहा कि तुम सर्वश्रेष्ठ हो, सम्पूर्ण पृथ्वी का पालन करो। ऐसा प्रतीत होता है कि चन्द्रगुप्त के बड़े पुत्र काच ने इस निर्णय को मानने से इंकार कर दिया और बलात् सिंहासन पर अधिकार कर लिया, परन्तु समुद्रगुप्त भी चुप न रहा और उसने काच को पराजित किया। उत्तराधिकार के इस युद्ध का इस प्रशस्ति में स्पष्ट उल्लेख नहीं है परन्तु निर्वाचन के बाद बाढ़ी पंक्तियों में युद्ध, विजय, पराजय, शरण, प्रणाम आदि के जो शब्द प्राप्त होते हैं, उनसे यह सिद्ध होता है कि निर्वाचन के बाद समुद्रगुप्त को कुछ युद्ध करने पड़े थे।

समुद्रगुप्त के निर्वाचन और उसके भाइयों के विद्रोह के पश्चात् प्रयाग—प्रशस्ति उसके द्वारा अच्युत, नागसेन, गणपतिनाग और कोटकुलज के विरुद्ध लड़े गये युद्धों का वर्णन करती है।

समुद्रगुप्त ने युद्ध में अच्युत (अहिच्छत्र का नागवंशीय राजा, मुद्रा परअच्युष नागसेन हर्षचरित का नागवंशीय पद्मावती का शासक अथवा जायसवाल का मथुरा का नागवंशीय शासक, और गणपतिनाग भण्डारकर के अनुसार विदिशा का शासक, जायसवाल के अनुसार पद्मावती का) को युद्ध में उन्मीलित किया और कोट कुलन पाटलिपुत्र अथवा कन्नौज के स्वामी) को बन्दी बना कर पुष्पनगर (पाटलिपुत्र अथवा कन्नौज) में कीड़ा की ।

प्रयाग-प्रशस्ति समुद्रगुप्त के प्रथम आर्यावर्त युद्ध के पश्चात् उसके दक्षिण भारतीय अभियान का वर्णन करती है। समुद्रगुप्त को दक्षिणापथ के निम्न लिखित १२ राजाओं से युद्ध करने पड़े थे—

१—कोशल का महेन्द्र— यहाँ कोशल से तात्पर्य दक्षिण कोशल से है, जिसके अन्तर्गत आधुनिक विलासपुर, रायपुर और सम्भलपुर के जिले सम्मिलित थे। इसकी राजधानी धोपुर थी। महेन्द्र यहाँ का शासक था ।

२—महाकान्तर का व्याघ्रराज हेमचन्द्र रायचौधरी के अनुसार महाकान्तर गोंडवाना के पूर्व का बन्य प्रदेश था। यहाँ का राजा व्याघ्रराज था, जिसके समीकरण के विषय में विद्वान एकमत नहीं है। रायचौधरी के अनुसार वह नचना और गंजाम के अभिलेखों में उल्लिखित वाकाटक राजा पृथ्वीषेण प्रथम का सामन्त न्यानदेव है। भण्डारकर के अनुसार बह उच्चकल्प के राजा जयन्त का पिता था, जो बाकाटकों के अधीन मध्य प्रदेश में शासन, कर रहा था।

३— केरल का मण्टराज कीलहर्ने ने केरल का समीकरण गोदावरी और कृष्णा के बीच स्थित कोलेह कासार नामक स्थान से किया है। बार्नेट एवं रायचौधरी ने कोदराल की पहिचान दक्षिण भारत के कोराड नामधारी गांवों में से किसी एक से की है। पुलकेशी द्वितीय के ऐहोल अभिलेख में चोल एवं पाण्डवो के साथ केरल का उल्लेख मिलता है। मण्टराज यहाँ का राजा था।

४—पिष्टपुर का महेन्द्रगिरि—पिष्टपुर का समीकरण घुनिक आंध्र प्रदेश के गोदावरी जिले में स्थित पीठापुरम नामक स्थान से किया जाता है। पुलकेशी द्वितीय के ऐहोल अभिलेख में भी इसका उल्लेख मिलता है। यहाँ का राजा महेन्द्रगिरि था।

५—कोटूर का स्वामिदत्त एलीट ने कोटूर का समीकरण कोयम्बटूर जिले के कोटूर नामक स्थान में किया है। डूर्शल ने इसकी पहिचान गंजाम जिले के कोटूर नामक स्थान से की है। सैलेतोर द्वारा बेलारी जिले के कुडलिगी वांलुक में आधुनिक कोटूर से इसकी पहिचान स्वीकार नहीं की जाती है; क्योंकि इस पहिचान से समुद्रगुप्त का पश्चिमी घाट की ओर जाना स्वीकार करना पड़ेगा। स्वामिदत्त यहाँ का राजा था।

६—एरण्डपल्ल का बमन पलीट महोदय ने एरण्डपल्ल की पहिचान खानदेश के एरण्डोल नामक स्थान से की है परन्तु इजे स्वीकार करने पर समुद्र-गुप्त का पश्चिमीघाट पर अभियान स्वीकार करना पड़ेगा। गंजाम जिले में स्थित एरण्डपल्ली से इसका समीकरण उचित प्रतीत होता है। यहाँ का राजा दमन था ।

७—कांची का विष्णुगोप— कांची पल्लवों की राजधानी थी। इसका समीकरण आधुनिक काञ्चीवरम् से किया जाता है। यहाँ का राजा विष्णुगोप पल्लव राजा प्रतीत होता है।

८—अवमुक्त का नीलराज अवमुक्त की पहिचान अभी तक नहीं हो पायो है। वहाँ के शासक नीलराज के सम्बन्ध में भी किसी प्रमाण द्वारा कोई प्रकाश नहीं पड़ता । रायचौधरी के मतानुसार

यहाँ के राजा नीलराज के नाम से गोदावरी जिले में स्थित एक प्राचीन बन्दरगाह शनीलपल्लीश का स्मरण हो आता है।

६—बेंगी का हस्तिवर्मन— वेगी का समीकरण वेगों अथवा पढ़ें—वेगी ने किया जाता है, जो एल्लोर से ७ मील उत्तर कृष्णा गोदावरी नदियों के मध्य स्थित है। यहाँ के राजा हस्तिवर्मन के वंश के विषय में विद्वान एकमत नहीं हैं। हुल्लज के अनुसार यह आनन्द सत की परम्परा के कन्दर वंश का अन्तिवर्मा था। रायचौधरी, रमेशचन्द्रमजूमदार और दिनेशचन्द्र सरकार ने हस्तिवर्मन का समीकरण शालकायन वंश के हस्तिवर्मा प्रथम के साथ किया है, जो उचित प्रतीत होता है।

१०—पालक्क का उग्रसेन एलन, रमेशचन्द्र मजूमदार आदि विद्वानों ने पालक्क को नैलोर जिले में स्थित पल्लवों की एक प्रान्तीय राजधानी माना है। यहाँ का राजा उग्रसेन या ।

११—देवराष्ट्र का कुबेर स्मिथ, पलीट आदि विद्वानों ने देवराष्ट्र को महाराष्ट्र माना है, जो उचित नहीं है। दुब्रिया, रायचौधरी, रमेशचन्द्र मजूमदार, दिनेश चन्द्र सरकार आदि ने देवराष्ट्र को एलामांचिली माना है, जो अधिक उप—युक्त है। यहाँ का राजा कुबेर था।

१२—कुस्थलपुर का धनंजय स्मिथ महोदय ने कुस्थलपुर की पहिचान भ्रमवश द्वारिका के एक अन्य नाम कुरुस्थल से की है। आयंगार ने कुस्थलपुर का अर्थ कुशस्थलीनदी का पार्श्ववर्ती क्षेत्र लगाया है। बानेनट ने कुरुबलपुर का समीकरण उत्तरी अर्काट में स्थित कुडलूर से किया है। धनंजय यहाँ का राजा था ।

इस प्रकार दक्षिण भारत के इन प्रदेशों को जीतता हुआ समुद्रगुप्त कांची तक पहुँच गया था। समुद्रगुप्त ने इन राजाओं को पराजित कर बंदी बनाया (ग्रहण) और बाद में इन्हें स्वतंत्र कर (मोक्ष) उनके राज्य उन्हें लौटा दिये (अनुग्रह) । सम्भवतः इसका कारण यह था कि अपनी राजधानी पाटलि—पुत्र से कांची तक के दक्षिण भारत के प्रदेशों को कठोर नियंत्रण में रखना समुद्रगुप्त के लिए कठिन था। अतः उसने इन राजाओं की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए उनके प्रदेश उन्हें लौटा दिये। रघुवंश में इस प्रकार के विजेता को धर्मविजयी कहा गया है—

ग्रहीत प्रतिमुक्तस्य स धर्मविजयी नृपः । श्रियं महेन्द्रनाथस्य जहार, न तु मेदिनीम् ।।

समुद्रगुप्त की दक्षिण भारत की विजय के उपरान्त प्रयाग—प्रशस्ति आर्यावर्त के नौ राजाओं का उल्लेख करती है, जिनको पराजित कर समुद्रगुप्त

१—रघुवंश, सर्ग ४, श्लोक ४३ । ७८

ने उनके राज्य छीनकर अपने राज्य में सम्मिलित कर लिये लिये। प्रयाग—प्रशस्ति के राजाओं के पहले हले और बाद में का उल्लेख दो बार हुआ है—दक्षिण भारत की विजय द्वानों ने यह अर्थ ग्रहण किया कि समुद्र—। इससे कुछ विद्वानों गुप्त ने आर्यावर्त में दो दो युद्ध किये। संघर्ष दक्षिण भारत की विजय के उसका आर्यावर्त के राजाओं के साथ पहला पहला हुआ, जिसमें उसने चार राजाओं को दक्षिण भारत की विजय के बाद हुआ, जिसमें दूसरा संघर्ष दक्षिण पराजित किया और दूस उसने नी राजाओं को किया। इसके विपरीत रायचौधरी आदि विद्वान पराजित कि आप वर्त के एक ही युद्ध का प्रतिपादन करते हैं। उनके अनुसार पहले युद्ध की संक्षेपिका दी गयी और बाद में उसका विस्तृत विवरण दिया गया है। समुद्रगुप्त ने आर्यावर्त के निम्नलिखित नी राजाओं को पराजित कर उनके राज्य अपने राज्य में मिला लिए—

१—रुद्रदेव—के० एन० दीक्षित और काशीप्रसाद जायसवाल ने रुद्रदेव को बाकाटक राजा रुद्रसेन प्रथम माना है। परन्तु इन विद्वानों का यह कथन। इस लिए उचित प्रतीत नहीं होता क्योंकि रुद्रदेव आर्यावर्त का राजा है और बाकाटक नरेश रुद्रसेन दक्षिण भारत का। रुद्रदेव सम्भवतः कोशाम्बी का राजा था। कोशाम्बी से शुरुद्र नामांकित मुद्रायें भी प्राप्त हुई हैं।

२—मतिल— बुलन्दशहर से मतिल नामांकित एक मुद्रा प्राप्त हुई है, जिसे जायस राल ने मतिल की मुद्रा मानकर उसे बुलन्दशहर के आस-पास का शासक स्वीकार किया है। इसके विपरीत एलन का कथन है कि इस मुद्रा पर मतिल के साथ किसी उपाधि का प्रयोग नहीं हुआ है बतः यह किती सामान्य नागरिक या व्यापारी की मुद्रा रही होगी ।

३—नागदल—रैरसन के मतानुसार यह कोई नागराजा था। जब कि: जायसवाल महोदय उसे लाहौर से प्राप्त मुद्रा में उल्लिखित महाराजा महेश्वरनाग का पिता नागभट मानते हैं। सबसे अधिक उपयुक्त मत दिनेशचन्द्र सरकार का प्रतीत होता होता है, जो यह मानते हैं कि नागदत्त बंगाल में परवती गुप्त नामान्त गवर्नरों का कोई पूर्वज रहा होगा । राजाओं के के दत्त नार

वर्मा भण्डारकर के अनुसार चन्द्रवर्मा बंगाल के ४—चन्द्रवर्मा—पुष्करणा का राजा था। वहाँ पर सुलुनिया पर्वत पर प्राप्त एक अभिलेख में चन्द्रवर्मा का उल्लेख भी हुआ है। परन्तु हरप्रसाद शास्त्री करण का समीकरण मारवाड़ के पोरकरण से करते हैं ।

५, ६, ७ पणतिलाय, नागसेन एवं अच्युत—आर्यावर्त के प्रथम युद्ध के वर्णन में किया — इन राजाओं का उल्लेख जा चुका है। समीकरण पुराणों में उल्लिखित भूतिनन्द, शिशुनन्दि एवं नन्दिशशस् में से किसी एक के साथ करना चाहिए ।

८—बलवर्मा दण्डेकर महोदय के अनुसार यह हर्ष के समकालीन कामरूप के राजा भास्करवर्मा का पूर्वज था। लेकिन कामरूप आर्यावर्त के अन्तर्गत नहीं था। अतः यह समीकरण उपयुक्त प्रतीत नहीं होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि बलवर्मा गुप्तों के अधीन गया में राज्य कर रहे मौलरियों का कोई पूर्वज रहा होगा।

आर्यावर्त के उपयुक्त नौ राजाओं को उन्मीलित करने के पश्चात् प्रयाग—प्रशस्ति के अनुसार समुद्रगुप्त ने वन्य प्रदेश के राजाओं को अपना दास बनाया पलीट का मत है कि यह वन्य प्रदेश गाजीपुर से जबलपुर तक फैला हुआ था। पलीट के अनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि जब समुद्र—गुप्त दक्षिण—भारत की विजय के लिए जा रहा था तो उसने मार्ग के वन्य राजाओं को अपना स्वामित्व मानने के लिए विवश किया। परन्तु प्रयाग—प्रशस्ति में आटविक राजाओं का उल्लेख दक्षिण भारत की विजय और पूर्वी अभियान के पहले हुआ है अतः यह कल्पना उचित प्रतीत होती है कि यह वन्य प्रदेश आर्यावर्त और पूर्वी सीमान्त प्रदेशों के बीच में स्थित था ।

प्रयाग—प्रशस्ति अन्य देशों के राजाओं के पश्चात् पूर्वी और पश्चिमी सीमान्त प्रदेशों का उल्लेख करती है, जिन्होंने समुद्रगुप्त के शौर्य से प्रभावित होकर बिना युद्ध किये उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। ये प्रदेश निम्नलिखित, थे—

पूर्वीसीमान्त प्रदेश पूर्वी सीमान्त प्रदेशों में समतट (दक्षिणपूर्वी बंगाल राजधानी कर्मान्त), उवाफ (पलीट का ढाका, स्मिथ का उत्तरी बंगाल का कोई भाग, भट्टसाली का असक के नवगांव जिले

का डबोक, जो उचित प्रतीत होता है), कामकर (आसाम), नेपाल और कर्तपुर (राय चौधरी के अनुसार कुमायूँ गढ़वाल एवं रुहेलखंड का भूतपूर्व कतुरिया राज)

का उल्लेख हुआ है।

पश्चिमी सीमान्त प्रदेश—पश्चिमी सीमान्त प्रदेश में संवात्मक शासन व्यवस्थाबाली निम्नलिखित गण जातियाँ निवास करती थीं—

मालव— मालव जाति अत्यन्त प्राचीन थी। यूनानियों ने इसे मल्लोई के नाम से पुकारा है। सिकन्दर के समय यह जाति पंजाब में निवास करती थी। कालान्तर में यह राजस्थान में जाकर बस गये। इस जाति की मुद्राओं पर श्मालवानी जयःश् एवं श्मालवगणस्य जयः श्लेख प्राप्त होता है। दुत्रिया के अनुसार नन्दि का त्—नन्दि—यह नागवंशी राजा प्रतीत होता है।

रतपुर और राजपूताना के बीच आजु मायन— समुद्रगुप्त के समय यह जाति भरतपुर निवास करती थी लवर । भरतपुर और अल राज्य में उनकी मुद्राएँ पर्याप्त आर्जुनायनानो जयःश् लेख उस्कोण है। जिनपर श्आ संख्या में प्राप्त हुई हैं,

यौधेय यौधेय जाति का उल्लेख देख पाणिनि ने आयुधजीवी जाति के रूप में किया है। रुद्रदामन के जूनागढ़ अभिलेख में इनका उल्लेख हुआ है। मुल्तान से सहारनपुर तक के प्रदेश की मुद्रा प्राप्त होती है, जिन में इनकी मलता है। पंजाब पर श्यौषेयानां गणस्य जयः लेख मिलर का योहियावार प्रदेश यौधेयों के नाम पर ही स्थापित हुआ

माइक— यह जाति राबी और चिनाव नदियों के मध्य निवास करती थी । अष्टाध्यायो और महाभारत में भी इनका उल्लेख मिलता है।

आभीर— सिकन्दर के समय आभीरों का गणराज्य विद्यमान था। यूनानियों ने उन्हें सोड्राइ नाम से पुकारा है। मिलसा एवं झांसी के मध्य आधुनिक अहिरबाड़ा इसी जाति के नाम पर है।

प्राजुन— कौटिल्य के अर्थशास्त्र में इनका उल्लेख प्राप्त होता है। स्मिथ और भण्डारकर के अनुसार यह जाति मध्य प्रदेश के नरसिंहपुर जिले में राज्य कर रही थी।

सनकानीक— यह जाति आधुनिक मिलसा में राज्य करती थी। चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के समय गुप्त सम्बत् ८२ के उदयगिरि गुप्त अभिलेख से यह ज्ञात होता है कि सनकानीक गुप्तों के अधीन थे।

काक— इस जाति का उल्लेख महाभारत में मिलता है। स्मिथ, रायचौधरी और सरकार के मतानुसार इनका राज्य आधुनिक सांची में था। कुछ प्राचीन अभिलेखों में सांची को काकबाट अथवा काकनादवाट का नाम दिया गया है।

खरपरिक— इस जाति का समीकरण भण्डारकर महोदय ने बहितगढ़ लेख की खरपर जाति से किया है, जो मध्यप्रदेश के दमोह जिले में राज्य कर रही थी। पूर्वी और पश्चिमी सीमांत राज्यों के अंत में आदि शब्द का प्रयोग हुआ है, जिससे यह प्रकट होता है कि कुछ अन्य राज्यों ने भी समुद्रगुप्त की अधीनता स्वीकार की थी।

प्रशस्ति की तेईसवीं पंक्ति में दैवपुत्र शाहिशाहानुशाही, एक मुरुण्ड, सिहल और सर्वद्वीपवासी विदेशी पाक्तियों का उल्लेख हुआ है। दैवपुत्राहिशाहानुशाही इसका तात्पर्य समुद्रगुप्त के समय में उत्तरपश्चिम में विद्यमान उत्तर कुषाणों से है। कुछ विद्वान इसका अर्थ दैवपुत्र, शाहि, बाहानुशाही उपाधि धारण करने वाले तीन कुषाण राज्यों के राजाओं से ग्रहण करते हैं, जो उत्तरी-पश्चिमी भारत में राज्य कर रहे थे।

शक— समुद्रगुप्त के समय शक पश्चिम भारत में राज्य कर रहे थे। अल्लेकर के मतानुसार समुद्रगुप्त का समकालीन महाक्षत्रप रुद्रसेन तृतीय था। एलन ने शकों की स्थिति उत्तरी भारत में स्वीकार की है।

मुरुण्ड — टालेमी के मतानुसार मुरुण्ड गुप्तों के उदय के पूर्व गंगा की ऊपरी घाटी में शासन कर रहे थे। हेमचन्द्र द्वारा रचित वभिधानचिंतामणि में मुरुण्डों को लम्पाक (अफगानिस्तान में लघमन) का निवासी बताया गया है। स्टेनकोनो ने मुरुण्ड को एक अलग जाति नहीं माना। उनके मतानुसार शक भाषा में मुरुण्ड का तात्पर्य श्वामीश है। इसलिये यहाँ मुरुण्ड का अर्थ शकों का राजा अथवा शकों का स्वामी है। परन्तु प्रयाग-प्रशस्ति में शक और मुरुण्ड दोनों का अलग-अलग उल्लेख हुआ है अतः दोनों को दो जातियाँ मानना अधिक समीचीन होगा। र

सिहल— सिहल का तात्पर्य लंका से है। चीनी लेखों से ज्ञात होता है कि समुद्रगुप्त के समकालीन लंका के राजा मेघवर्ण ने बोधगया के पवित्र स्थानों के दर्शनों के लिये दो भिक्षुओं को भेजा था, जिन्हें वहाँ विधाम गृह के अभाव में अनेक असुविधाओं का सामना करना पड़ा। अतः मेघ-वर्ण ने समुद्रगुप्त के पास एक दूत मंडल भेजा, जिसने समुद्रगुप्त को अनेक उपहार भेंट किये तथा बोधगया में लंका के यात्रियों की सुविधा के लिए एक विश्रामगृह और एक मठ बनवाने की आज्ञा प्राप्त की।

सर्वद्वीपवासी— सिहल के उपरांत प्रयाग-प्रशस्ति में सर्व-दीपवासियों का भी उल्लेख हुआ है। यह दक्षिण पूर्वी एशिया के भारतीय उपनिवेशों की ओर संकेत करता है, जिन्होंने अपनी मातृभूमि के शक्तिशाली सम्राट के साथ सम्बन्ध स्थापित करना श्रेयस्कर समझा।

उपयुक्त विदेशी जातियों ने आत्मनिवेदन (समुद्रगुप्त की सेवा में उपस्थित होकर), कर्मोपायनदान (अपनी पुत्रियों का विवाह में दान देकर) और गरुत्मदङ्कस्वविषयभुक्तिशासनयाचनात् (जायसवाल के अनुसार अपने जिलों और प्रांतों में गरुड़ चिह्न से अंकित गुप्त मुद्राओं के प्रयोग की अनुमति माँगकर, अल्लेकर और मजूमदार के अनुसार अपने जिलों एवं प्रान्तों उपयुक्त उल्लिखित सीमांत प्रदेशों के राज्यों ने समुद्रगुप्त को सबंकरदान (सभी प्रकार से कर देकर), आज्ञाकरण (उसके आदेशों का पालन कर) और प्रणामागमन (बिभिन्न अवसरों पर उपस्थित होकर उसके प्रति निष्ठा का प्रदर्शन) के द्वारा सन्तुष्ट किया।

गुप्त से गरुड़ के चिह्न से अंकित आ लिये समुद्रगुप्त में शासन करने के लिए मांगकर के द्वारा समुद्र गुप्त को सन्तुष्ट किया। आज्ञापत्र प्रयाग-प्रशस्ति समुद्रगुप्त के व्यक्तित्व और चरित्र पर भी प्रकाश डालती है। प्रशस्ति के अनुसार ऐसा कौन सा गुण है, जो समुद्रगुप्त में न हो अर्थात् उसमें सभी गुण-विद्यमान थे। समुद्रगुप्त ने अनेक युद्धों में विजय प्राप्त कर देश में एकता स्थापित की। सैकड़ों युद्धों में भाग लेने के कारण उसके शरीर पर परखु, शर, मांकु, शक्ति आदि अस्त्र-शस्त्र के द्वारा घाव होने के कारण अनेक चिह्न बन गये थे। उसने अपने परो से अस्य राजानों की कीर्ति को कुचल डाला था युद्ध में वहें अद्वितीय था। समुद्रगुप्त विजेता होने के साथ-साथ नीति-निष्ठ भी था। वह इस तथ्य को भलीभाँति जानता था कि, दक्षिणी

भारत, सीमान्त प्रदेशों और विदेशी राज्यों को प्रत्यक्ष रूप से अपने अभीन रचना असम्भव है अतः उसने दक्षिण के राजाओं को पराजित कर उनके राज्य उन्हें लौटा दिये, सीमान्त प्रदेशों पर अपना प्रभाव स्थापित किया और विदेशी राज्यों के साथ मंत्री सम्बन्ध स्थापित किया। इसके विपरीत उसने आर्यावर्त के राजाओं का उन्मूलन कर उनके राज्यों को अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया। प्रयाग-प्रशस्ति समुद्रगुप्त के विद्या-नुराग पर भी प्रकाश डालती है। समुद्रगुप्त के मन को विद्वानों के स त्वंग-सुख का व्यसन था। वह शास्त्र के गूढ़ अर्थ को समझने वाला था। उसे उसके उच्चकोटि के काव्य के लिए शकविराज की उपाधि दी गयी थी। समुद्रगुप्त डगलित कलाओं में भी रुचि रखता था। प्रयाग-प्रशस्ति के अनुसार उसने अपनी, सङ्गीत निपुणता से देवताओं के संगीताचार्य तुम्बुरु और नारंद को भी लज्जित कर दिया था। प्रयाग प्रशस्ति के इस कथन का समर्थन समुद्रगुप्त की मुद्रायें भी करती हैं। अपनी वीणाशैली की मुद्राओं में समुद्रगुप्त: बीणा लिए हुए चित्रित किया गया है। समुद्रगुप्त धर्म-परायण भी था। इसीलिए उसे धर्म की चहार-दीवारी कहा गया है। वह अत्यन्त दयावान एवं महान वानी था। कृपण, दीन, अनाथ एवं आतुर व्यक्तियों के उद्धार के लिए वह सदैव प्रयत्नशील रहता था। उसने सैकड़ों-हजारों गाँव दान में दी थीं। प्रयाग-प्रशस्ति उसकी तुलना कुबेर, वरुण और इन्द्र से करती है ।

प्रयाग-प्रशस्ति अपने रचनाकार हरिषेण के विषय में भी सूचनायें प्रदान करती है, जो महादंडनायक वभूति का पत्र और समुद्रगुप्त का कुमारामात्य तथा सन्धिविग्रहिक: था। अल्टेकर के अनुसार कुमारामात्य उच्च-कोटि के कर्मचारी (आधुनिक आई० ए० एस० के समान) होते थे। सन्धिविग्रहिक का उल्लेख करते हुए याज्ञवल्क्य ने लिखा है कि बह में प्रवीण हुजा करता था। वह शिलापट्टों पर या ताम्रपत्रों पर जी राजकीय मुद्रा से अङ्कित होते थे, राजा की आज्ञानुसार संसों बया का परिचय वित्त हुए उसकी कृतियों और दानों का वर्णन उत्कीर्ण कराता था। तिलमट्ट ने प्रयाग प्रशस्ति को अनुष्ठित किया ।

प्रयाग प्रथस्ति चम्पू-शैली में की गयी है। इसका प्रारम्भिक भाग पक्ष में और उत्तरकालीन भाग गद्य में लिखा गया है। इसके मन्त्रांकास्ती, सम्बंरा, और शार्दूलविक्रीडित छन्दों में लिखे गये हैं। इसकी गद्या बौली की तुलना वाणभट्ट की गौड़ी शैलों से की जा सकती है।

दुर्भाग्यवश प्रयाग प्रशस्ति में तिथि का उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। पलीट के अनुसार बह प्रशस्ति समुद्रगुप्त की मृत्यु के पश्चात् उसके किस्सी उत्तराधिकारी द्वाय उत्कीर्ण करायी गयी होगी, परन्तु वी०बी० डिस्कलकर ने पलीट महोदय के इस मत का विरोध किया है। उनके अनुसार यह प्रशस्ति समुद्रगुप्त के जीवन काल में ही उत्कीर्ण करायी गयी होगी। इस सम्बन्ध में कुछ तथ्य विचारणीय है- समुद्रगुप्त की मुद्रा शावम्हाता है कि उसने बश्वमेध-यत्र सम्पन्न किया था, पर प्रयाग प्रशस्ति में उसका उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। बतः ऐसा प्रतीत होता है कि यह प्रशस्ति अश्वमेध अज के पूर्व ही उत्कीर्ण करायी होगी। इस प्रशस्ति में काव्यात्मक ढङ्ग से यह ब्रह्म गया है कि हरिषेण की मेभा समुद्रगुप्त के चरणों में समीप विचरण के कारण उन्मीलित हो श्री बोर उन्हीं की प्रेरणा से यह प्रवास्ति लिखी गयी ।